शत्रुता

अल्पसंख्यक आर्यसमाजी अपने-आपको पहले हिंदू और बाद में आर्यसमाजी मानते हैं। बाकी आर्यसमाजी अपने-आपको 'हिंदू नहीं' बल्कि केवल आर्यसमाजी मानते हैं। अल्पसंख्यक होने के कारण, जोे आर्यसमाजी अपने-आपको पहले हिंदू मानते हैं, वे इस बात की खुलेआम घोषणा अपने लोगों में नहीं करते। कारण, ऐसा करने से कुछ हासिल न होगा, बल्कि वे अपनों में ही परायों जैसे जीयेंगे। • यही कारण है कि आर्यसमाजी हिंदुओं पर यह जाहिर नहीं होने देते कि वे हिंदुओं को किस दृष्टि से देखते हैं। वे जानते हैं कि इस बात की खुलेआम घोषणा करने से आर्यसमाज को बड़ी हानि होगी। आज हिंदूसमाज में उनकी जो पहचान है, वह मिट जायेगी।

यह एक आँखो देखी सत्य घटना है

रविवार 29 अप्रैल 2007 समय दोपहर बारह-साढ़े-बारह के बीच। स्थान आर्यसमाज, वाशी, नवी मुम्बई। अवसर वाशी आर्यसमाज रजत-जयन्ती शास्त्रार्थ समारोह। मंच पर बैठे व्यक्तियों में एक महिला, बाकी सभी पुरुष। महिला की पदवी शास्त्री। आर्यसमाज में एक विदुषी की मान्यता प्राप्त होने के कारण उन्हें एक अन्य प्रांत से आमंत्रित किया गया था। स्वाभाविक था कि स्थानीय आर्यसमाजियों को उनसे दिग्दर्शन की अपेक्षा थी। उनका भाषण छोटा, सधा हुआ, प्रभावी था।

आर्यसमाज का सबसे बड़ा दुश्मन हिन्दू?

अनेक वर्षों पहले आर्यसमाज ने उच्चन्यायालय में दावा किया था कि आर्यसमाज एक हिन्दू संगठन नहीं है। आर्यसमाज के एक उच्चस्तरीय अधिकारी ने मुझसे इस बात की पुष्टि भी की थी। पर आज मैंने एक नई बात जानी। महिला शास्त्री ने मेरे समक्ष सारी सभा को यह भी बताया कि आर्यसमाज का सबसे बड़ा दुश्मन हिन्दू है।

उस सोच को सम्पूर्ण सभा की सहमति प्राप्त!

जब (1) आर्यसमाज का एक विशिष्ट वक्ता, आर्यसमाज की एक विशिष्ट सभा में, आर्यसमाज की एक स्वीकृत-सोच को श्रोतागणों के सामने प्रस्तुत करता है; और (2) उस सभा में उपस्थित आर्यसमाज के वरिष्ठजन, उस बैठक की समाप्ति तक, आर्यसमाज की उस सोच का खण्डन नहीं करते हैं, बल्कि सभा की समाप्ति के पहले उस वक्ता को, उसी सभा में, सभी श्रोतागणों के सामने, सम्मानित करते हैं; एवं (3) श्रोतागणों में से कुछ श्रोता उठकर मंचपर आते हैं और केवल उसी एक वक्ता के साथ लगभग लिपटकर फोटो खिंचवाकर, अपनी आत्मीयता का प्रदर्शन करते हैं; तो यह निष्कर्ष निकालना अनुचित न होगा कि आर्यसमाज की उस सोच को, आर्यसमाज में उस सभा की पूर्ण सहमति प्राप्त थी।

जिसको सुधारना है, उसे दुश्मन माना तो कैसे चलेगा?

हिन्दुओं को बचपन से स्कूल की पाठ्यपुस्तकों के द्वारा यही बताया जाता रहा है कि आर्यसमाज ने हिंदूसमाज का सुधार किया है। यहाँ प्रश्न उठता है कि आर्यसमाज, जो हिंदू को अपना पहला शत्रु मानता है, वह हिंदूसमाज का सुधार कैसे कर सकता है? किसी में सुधार लाने के लिए पहले उसके प्रति मन में प्रेमभाव होना आवश्यक है। शत्रुता का भाव मन में छुपाकर आप उसका बुरा ही कर सकते हैं, अच्छा कभी नहीं। • आगे चलकर इस बात का विश्लेषण करेंगे कि आर्यसमाज ने वस्तुतः हिन्दूसमाज का भला किया या बुरा किया? हर सिक्के के दो पहलू होते हैं। जो पहलू हर कोई आपको दिखाता आया है, उसीको शब्दों के हेर-फेर के साथ दिखाना तो सहज है, पर उसमें मुझे रुचि नहीं।

विष

'राम नाम जपना, पराया माल अपना' - आजकल तो यह जुमला अधिक सुनाई नहीं देता है पर जब मैं स्कूल में था उन दिनों इसका बड़ा बोल-बाला था। इस जुमले ने न-जाने कितने बालक-बालिकाओं के मन में ब्राह्मणों के विरुद्ध दुर्भावना का बीज बोया था। समाज में कुछ ऐसी छवि आँकी गई थी जैसे ब्राह्मण मुँह से तो राम-नाम जपते दिखाई देते हैं पर उनकी नज़र दूसरों के माल पर रहती है जिसे वे हड़पने की फ़िराक में होते हैं। यह ख्याल कभी भी मेरे मन में न आया कि आर्यसमाज का इस षड़यंत्र में कोई हाथ हो सकता है। शास्त्राणी ने अपने श्रोताओं को बड़े ही गर्व से बताया कि उस तुकबंदी को रचने का श्रेय आर्यसमाज को ही जाता है।

ब्राह्मण-विद्वेष का वह बीज जिसे आर्यसमाजियों ने बड़े परिश्रम से सींच कर बड़ा किया

ब्राह्मण-विद्वेष का वह बीज जो सदियों पहले ईसाई धर्माधिकारियों ने बोया था, उसी को सींच कर, सँवार कर आर्यसमाज ने इस स्थिति तक पहुँचा दिया है कि आज आम हिन्दू के मन में ब्राह्मण के प्रति उलाहना की भावना बहुत प्रखर हो चुकी है। हिन्दूसमाज से अपने आपको अलग मानते हुए, पर अपना हिन्दू नाम न छोड़ते हुए, हिन्दुओं को इस भ्रांति में रखकर कि वे हिन्दुओं के शुभचिंतक हैं, हिन्दुओं का 'अपना' बनकर, हिन्दुओं में हिन्दुओं के प्रति वैमनस्य का बीज बोते हुए, हिन्दुओं में हिन्दू आस्थाओं के प्रति शंका का बीजारोपण करते हुए, हिन्दुओं को अपनी जड़ों से काटते हुए, ये अपने आपको हिन्दू-हितैषी कहने वाले, हिन्दुओं के साथ आँख-मिचौली का खेल खेलते रहे, और हम उन्हें अपना मानते हुए उनपर विश्वास करते रहे।

लघुशंका (पेशाब) कर उसे अपने ही मुँह में भर लें!

आर्यसमाजी अपनी पहचान हिंदुओं से अलग रखना चाहते थे। इसलिए वे अपने-आपको 'वैदिक' और हिन्दुओं को 'पौराणिक' कहते थे। सम्भवतः वेदों पर अपना स्वामित्व स्थापित करना चाहते थे। एक वक्ता ने हम श्रोताओं को बताया कि शास्त्रार्थ के दौरान पौराणिक विद्वान ने कहा - मुझे एक लघु शंका है। लघु का अर्थ है छोटा। शंका का अर्थ है जिज्ञासा। इस पर वैदिक विद्वान ने उत्तर दिया कि लघुशंका कर उसे अपने ही मुँह में भर लें। लघुशंका का अर्थ होता है पेशाब। इस घटना को वक्ता ने कुछ इस अंदाज में सुनाया जैसे कि यह वैदिकों की पौराणिकों पर विजय की घोषणा थी। मैं सभागृह में सबसे पीछे की पंक्ति में बैठा हुआ था। सामने मंच पर वक्ताओं के पीछे दीवार पर एक बहुत बड़ा बैनर लगा हुआ था जिस पर बड़े अक्षरों में लिखा हुआ था 'शास्त्रार्थ'। एक बाहरी द्रष्टा के रूप में मैंने उस दिन जाना कि आर्यसमाज के विद्वानों में विद्वता का स्तर क्या है एवं उनकी दृष्टि में 'शास्त्रार्थ' के मायने क्या हैं।

आर्यसमाजी हिन्दू को सनातनधर्मी नहीं मानते

सभा की समाप्ति के पश्चात, एक आर्यसमाजी से मैंने कहा कि चाहे आर्यसमाजी अपने-आपको हिन्दुओं से अलग क्यों न मानंे पर आर्यसमाजियों में एवं हिंदुओं में एक समानता तो अवश्य है कि दोनों सनातनधर्मी हैं। जिस व्यक्ति ने उत्तर दिया वह आय-आय-टी से पी-एच-डी कर रहा था, अतएव आशा की जा सकती है उसे इतनी समझ तो अवश्य ही थी कि वह क्या कह रहा है। उसका उत्तर था - केवल आर्यसमाजी ही सनातन धर्मी हैं, हिन्दू नहीं। इस प्रकार से उसने उस कड़ी को भी काट दिया जो एक आर्यसमाजी को, वेदों के माध्यम से, हिंदुओं से जोड़ता था। आर्यसमाजियों में यह अलगाव की भावना अत्यंत गहरी है।

आर्यसमाजी हिन्दू की पहचान को भी नकारते

आर्यसमाजियों के रेकॉर्ड की सूई बस एक ही जगह पर अटक गई है। भिन्न-भिन्न आर्यसमाजियों को अलग-अलग स्थितियों में मैंने एक ही रट लगाते हुए पाया - हिन्दू आपकी पहचान ही नहीं है, बताइये हिन्दू शब्द आया कहाँ से, वेदों में तो है ही नहीं। यदि आप अपना नाम मनसुखराम बताते हैं और सारी दुनिया आपको मनसुखराम के नाम से जानती है, तो क्या पहले वेदों में खोजने बैठेंगे कि मनसुखराम वहाँ है कि नहीं? यदि हिन्दू अपने आपको हिन्दू कहता है और यदि सारी दुनिया हिन्दू को हिन्दू नाम से जानती है, तो यह समय नहीं कि इस विवाद में समय गँवायें। उससे भी बड़ी समस्यायें हमारे सामने आज हैं जिनसे हमें पहले निपटना होगा।

घृणा

आर्यसमाज को हिन्दू शब्द से घृणा है

एक सज्जन से मैंने एक छोटासा प्रश्न पूछा था 'क्या आप आर्यसमाजी हैं?'इस बात का जिक्र किये बिना कि यह प्रश्न मैं उनसे क्यों पूछ रहा हूँ। उनका स्पष्ट उत्तर (11-5-2007) यह था-

'आर्यसमाज...(स्थान)...का मैं गत दस वर्षों से प्रधान (अर्थात् अध्यक्ष) हूँ। पहले मैं हिन्दू हूँ।आर्यसमाज को हिन्दू शब्द से घृणा है,वे स्वयं को आर्य कहलाना पसन्द करते हैं। आपने जिज्ञासा की, अतः मैं अपने विषय में जानकारी दे रहा हूँ। मेरे पिता........'

• अतः फ़र्क करना सीखिए उनमें (1) जो अपने-आपको 'पहले हिंदू' और 'फिर आर्यसमाजी' मानते हैं और (2) जो अपने-आपको केवल आर्यसमाजी मानते हैं, हिंदू नहीं। • अरे, हिंदू का हृदय तो इतना विशाल है कि वह सबको अपने में समा ले। जब मैंने हिंदू की इस भावना का जिक्र किया तो बम्बई आय-आय-टी से पी-एच-डी करने वाले नवयुवक विद्वान ने एक अपमानजनक जुमला सुनाया। मैंने उनसे कहा कि फिर से सुनायें पर तब वे टाल गये। बस में साथ यात्रा करते समय मैंने पुनः वही अनुरोध किया पर इस बार भी वह टाल गये यह कह कर कि बताउँगा। उन्हें अहसास हो चुका था कि आर्यसमाजियों के दिल कि बात अनजाने ही उनके जबान पर आ गई थी। वह भी एक लेखक के सामने जिसकी लेखनी द्वारा वह बात हिन्दुओं तक पहुँच सकती है। चतुर आर्यसमाजी यह भली-भाँति जानते हैं कि उनके हिंदू-सुधारक होने का मुखौटा इस हिंदू-बहुल समाज में बरकरार रहना आवश्यक है।

मूर्तिपूजा

आर्यसमाजियों मे मूर्तिपूजा के प्रति तिरस्कार की भावना का आधिक्य

आर्यसमाजियों द्वारा लिखित पुस्तकें एवं पत्र मुझतक पहुँचते रहे हैं। इन सभी में देवी-देवताओं एवं मूर्तिपूजा के प्रति तिरस्कार की भावना बड़ी स्पष्ट रूप से झलकती रही है। हिंदू देवी-देवताओं को वे काल्पनिक मानते हैं।

'ब्रह्माण्डीय सत्य एक है परन्तु प्रज्ञावान उसे भिन्न-भिन्न ढंग से अनुभव करते हैं--जैसे इंद्र, मित्र, वरुण, अग्नि, शक्तिशाली गरुत्मत, यम एवं मातरिस्वान' (ऋ ग्वेद 1-164-46) क्ष्च्‌एग़् 81-85990-52-2

आर्यसमाजियों की निष्ठा वेदों के प्रति है। जो इन्द्र को देवता मानते हैं, ऋग्वेद उन्हें प्रज्ञावान मानता है। अतः आर्यसमाजी भी उन्हें प्रज्ञावान ही मानते होंगे। अब यदि किसी देवता का नाम वेदों में नहीं है तो वह काल्पनिक हो गया। जो ऐसे देवता को मानता है वह अज्ञानी हो गया। पहले यह पता लगाइये कि वेदों में किन-किन देवी-देवताओं के नाम नहीं हैं। यदि उनकी पूजा करना नहीं छोड़ते तो आप ज्ञानी नहीं बन सकते। क्या तर्क है!

आर्यसमाज, इस्लाम, ईसाईधर्म - एक अजीब समानता

आर्यसमाजी दावा करते हैं कि केवल वेद ही ईश्वरीय वाणी है। मुसलमान दावा करते हैं कि केवल कुरआन ही ईश्वरीय वाणी है। ईसाई दावा करते हैं कि केवल बाइबिल ही ईश्वरीय वाणी है। तीनों के दावे एक दूसरे से टकराते हैं। तीनों अपनी मान्यताओं को ईश्वरीय ज्ञान का नाम देते हैं। तीनों हिंदू को मूर्तिपूजक एवं अज्ञानी मानते हैं।

कण-कण में बसने वाले राम

peye SkeÀ cetefle& kesÀ ceeO³ece mes DeeHe F&éej keÀer Hetpee keÀjles nQ, lees keÌ³ee Fme mebmeej kesÀ j®eef³elee keÀes Fme yeele keÀe DeeYeeme veneR neslee efkeÀ GmeerkeÀer Hetpee nes jner nw?

आपकी भक्ति में यदि शक्ति है

efpeme F&éej ves DeeHekeÀe ®esnje j®ee nw, keÌ³ee Jener F&éej DeHeves efueS SkeÀ ®esnje lekeÀ veneR j®e mekeÀlee? efpeme F&éej ves Deeþ neLe-HeeBJe Jeeues Dee@keÌìesHeme keÀes j®ee, keÌ³ee Jener F&éej 'DeHeves efueS' Deeþ neLe-HeeBJe veneR j®e mekeÀlee? DeeHe ³eefo Gmes Gmeer cetjle ceW osKevee ®eenles nQ, Deewj DeeHekeÀer YeeqkeÌle ceW ³eefo MeeqkeÌle nw, lees keÌ³ee Jen mJe³ebkeÀes Gmeer ªHe ceW Òeieì veneR keÀj mekeÀlee? ÒeMve GmekeÀer #ecelee keÀe veneR, yeequkeÀ DeeHekeÀer YeeqkeÌle keÀer MeeqkeÌle keÀe nw~

एक बालक की समझ

SkeÀ yeeuekeÀ Lee~ ceneefMeJeje$eer keÀer Hetpee Leer~ efMeJepeer kesÀ meeceves efceþeF³eeB jKeer ngF¥ LeeR~ SkeÀ ®etne Dee³ee Deewj SkeÀ efceþeF& Gþe ues ie³ee~ efceþeF& yeeuekeÀ keÀes oer ieF& nesleer lees Jen ®etns keÀes DeHeves efnmmes keÀe efceþeF& uesves ve oslee~ ®etns keÀes Yeiee oslee~ ®etne ³eefo ®eeueekeÀer mes Gþe Yeer ueslee lees yeeuekeÀ Gmes Keosæ[lee, GmekesÀ Heerís Yeeielee~ keÌ³ee cepeeue Leer efkeÀ ®etne GmekesÀ efnmmes keÀer efceþeF& ues Yeeielee! Hej, ³es kewÀmes efMeJepeer Les, pees kegÀí Yeer ve keÀj Hee³es~ keÌ³ee efMeJepeer ves keÀne Lee efkeÀ cegPes efceþeF& os, leeefkeÀ Jes Gme efceþeF& keÀer Henjsoejer keÀjles? efpemeves ³en mebmeej j®ee, keÌ³ee Jen SkeÀ efceþeF& kesÀ Heerís Yeeielee?

बँटवारा

वही बालक बड़ा होकर स्वामी दयानन्द सरस्वती बना और बनारस गया अन्यों पर अपनी सोच को थोपने। उन दिनों रुडॉल्फ होर्नले (Rudolf Hoernley) बनारस के प्रख्यात क्वीन्स कॉलेज के प्राचार्य हुआ करते थे। समय था विक्रम संवत 1926 (अर्थात 1869 ईस्वी)। अभी आर्यसमाज की स्थापना नहीं हुई थी। यह उससे छः वर्ष पहले की बात है। तब रुडॉल्फ होर्नले कई बार दयानन्द से मिले, और उसके पश्चात अपने लेख मे उन्होंने यह बात लिखी -

दयानन्द हिंदुओं के मन में यह बात भर देगा कि आजका हिंदूधर्म, वैदिक हिन्दू धर्म के पूर्णतया विपरीत है, और जब यह बात हिन्दुओं के मन में बैठ जायेगी तो वे तुरंत **हिंदूधर्म का त्याग** कर देंगे; पर तब दयानन्द के लिए उन्हें वैदिक स्थिति में वापस ले जाना सम्भव न होगा, ऐसी स्थिति में हिंदुओं को एक विकल्प की खोज होगी जो उन्हें हिंदू से ईसाई धर्म की ओर ले जायेगी।

»ÉÉäiÉ: *The Christian Intelligence*, Calcutta, March 1870, p 79 and A F R H quoted in *The Arya Samaj* by Lajpat Rai, 1932, p 42 quoted in *Western Indologists A Study in Motives.htm*, Purohit Bhagavan Dutt

षड़यन्त्रों को रचने वाला कोई और - मोहरा बनता कोई और

सदियों से ईसाइयों ने ब्राह्मणों पर अकथ्य अत्याचार किए (गोवा इनक्वीसिशन पुस्तक-12) पर ब्राह्मणों के प्रति हिन्दूसमाज की आस्था को न डिगा पाये। अब एक हिन्दू सन्यासी उन्हीं ब्राह्मणों के मुख पर कालिख पोतने को तैयार खड़ा था। इससे बेहतर अवसर और क्या हो सकता। अपनी संचार-व्यवस्था का सहारा लेकर उन्होंने कुछ ऐसी हवा बाँधी कि ब्राह्मण एक षड़यंत्रकारी दुष्ट के रूप में नजर आने लगा (पुस्तक-7) और दयानन्द एक महान समाज सुधारक के रूप में निखरता दिखा। ईसाई-अंग्रेज़ी शिक्षा प्रणाली पर आधारित स्कूल की पाठ्य-पुस्तकों में भी दयानन्द को एक बड़े समाज सुधारक के रूप मे दिखाया जाना आरम्भ किया गया। ऐसी छवि आँकी गई कि जैसे एक महान ज्ञानी समाज सुधारक ने बीड़ा उठाया है उस सड़े-गले हिन्दूसमाज का उद्धार करने के लिए जिसे ब्राह्मणों ने सदियों से बरगला रखा था।

धुरी को ही समूल उखाड़ फेंको

ईसाई-अंग्रेज़ बखूबी जानते थे कि हिन्दूसमाज की धुरी है ब्राह्मण वर्ग, और जब तक वे ब्राह्मण वर्ग का समूल उन्मूलन नहीं कर पाते तब तक उन्हें हिन्दुओं पर एकाधिपत्य का अवसर नहीं मिलेगा। अतः ब्राह्मण वर्ग उनका पहला निशाना बन चुका था। उन्हें आर्यसमाज को बढ़ावा देना था क्योंकि वे जानते थे कि एक 'विभीषण ही लंका ढा सकता है'। उन्होंने दयानन्द में उस योग्यता को पहचाना जो हिन्दुओं की सोच को बखूबी तोड़-मरोड़ सकता था। इस प्रकार स्कूलों की पाठ्य-पुस्तकों के माध्यम से दयानन्द के महान समाज सुधारक होने की जो तस्वीर खींची गई वह आज भी अपना जलवा दिखा रही है।

जिस टांग पर टिका रहा यह अस्तित्व हजारों वर्षों से

दयानन्द सरस्वती इस भ्रान्ति में जीते रहे कि वह हिन्दूसमाज का भला कर रहे हैं। क्या उन्हें हिन्दूसमाज की पूरी समझ थी? या फिर उन्होंने हिन्दूसमाज को केवल सतही तौर पर ही देखा था? हिन्दूसमाज में जो भी दोष उन्हें दिखाई दिए, क्या उनकी जड़ तक पहुँचने की चेष्टा उन्होंने कभी की? समाजसुधार की अपरिपक्व उत्तेजना में उन्हें भ्रम हो गया कि जिस टाँग पर हिन्दूसमाज हजारों वर्षों से टिका रहा (पुस्तक 7) उस में जहर फैल चुका है। दयानंद के इस भ्रम को ईसाई-अंग्रेज़ों ने अपनी संचार-व्यवस्था एवं पाठ्य-पुस्तकों के सहारे हम हिन्दुओं के मन में अच्छी तरह से बिठा दिया।

वही पुरानी बात

दयानन्द सरस्वती (1824-1883) कोई नई बात नहीं कह रहे थे। 50 वर्ष पहले वही बात कह गये थे निराकार ब्रह्म के उपासक, मूर्तिपूजा के विरोधी, राजा राम मोहन रॉय (1772-1833)। ब्रह्मसमाज के संस्थापक। मेधावी, 15 वर्ष की आयु में संस्कृत, अरबी, फारसी के ज्ञाता। ईसाई-अंग्रेज़ों ने उन्हें एक महान समाज सुधारक की पहचान दी। इससे ईसाई-अंग्रेज़ों के दो उल्लू सीधे हुए। एक - हिंदू समाज को एक सड़े हुए समाज की पहचान दी गई। दो - हिंदू समाज में एक विघटन की प्रक्रिया को बल मिला। ईसाई-अंग्रेज़ों ने अपने पुराने अनुभव को दयानन्द पर भी आजमाया।

दयानन्द ने कर दिखाया जो ईसाई-अंग्रेज़ न कर पाये

हिंदूसमाज में अपनी आस्थाओें के प्रति शंका के अनगिनत बीज आर्यसमाज ने बोये, प्राण-दायिनी जल का रूप धर कर, हिंदूसमाज रूपी वृक्ष की जड़ तक पहुँचकर, उसे सींचने के बहाने, धीरे-धीरे उन्हीं जड़ों को चाट गये।

नई पीढ़ियों की अपरिपक्व सोच का लाभ उठाओे

कॉलेज के दिनों की मुझे याद आती है। घर से भाग कर जब किसी को शादी करनी होती तो उसके कदम आर्यसमाज मंदिर की ओर बढ़ते। दोनों बालिग हैं और दोनों राजी हैं, इतना ही काफी होता। वे वहाँ से शादी करके आ जाते जो कानूनी तौर पर वैध होता। इस नव-दम्पति की निष्ठा अब किसके प्रति होती? उनका नया मसीहा तो आर्यसमाज था जिसने ऐन मौके पर उनकी मदद की। आगे चलकर इस दम्पति के बच्चे भी होते। यह दम्पति अब अपनी संतानों की निष्ठा को कौन सी दिशा देता? वह आर्यसमाज जिसकी परोक्ष उपज हैं ये बच्चे? या फिर वह हिंदूसमाज जो उनकी जड़ थी एक दिन? अपनी जड़ों से वे कटते जाते। आर्यसमाज के अनुयायियों की संख्या बढ़ती जाती। समाज का सुधार जो हो रहा था!

हिंदूसमाज का सुधार

भला कोई उसका सुधार करता है जिसे वह अपना दुश्मन मानता हो, जिससे वह घृणा करता हो, जिसके प्रति उसके मन में कोई सद्भावना न हो, जो उसे अपना न मानता हो, जो उसे तोड़ कर अपनी संख्या बढ़ाना चाहता हो? हाँ, वह सुधारक का मुखौटा पहनेगा, पर केवल अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए अथवा अपने अहं की परितुष्टि के लिए।

अहं की परितुष्टि

दयानन्द ने वह अभियान अपने अहं की परितुष्टि के लिए चलाया। उसके चेले-चामुण्डों ने उस अभियान को गुरु के प्रति अंधश्रद्धा एवं/अथवा अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए आगे बढ़ाया। अंग्रेज़ सरकार की संचार-व्यवस्था एवं शिक्षा-व्यवस्था ने उस प्रक्रिया को समाज-सुधार का जामा पहनाया।

सिक्के का दूसरा पहलू

क्या आर्यसमाज ने हिंदूसमाज का वस्तुतः सुधार किया? जो उत्तर आपको पढ़ाया गया है बचपन से वह है - हाँ। यह सिक्के का एक पहलू है। और दूसरा पहलू? आर्यसमाज ने हिंदूसमाज को तोड़ा और अपने आप को जोड़ा - हिंदू के मन में अपनी आस्थाओं के प्रति शंका के बीज बोकर।

ईसाई की मत सुनना

यही कार्य ईसाई ने भी किया पर दोनों के स्वार्थ आपस में टकराये। इसकारण आर्यसमाज के लिए आवश्यक हो गया कि हिंदू को सचेत करते कि ईसाई की मत सुनना। आर्यसमाजियों ने हिंदू को यह नहीं बताया कि हम भी तुम्हें अपनाना चाहते हैं, तुमसे तुम्हारी पहचान छीनकर। तुम्हारी पहचान जो है वह है एक अज्ञानी की। सारे ज्ञान की पोंटली तो ईश्वर केवल हम आर्यसमाजियों के ही सुपुर्द कर गए हैं!

ईश्वरीय ज्ञान

किसी को राह मिल गई

राजा राम मोहन रॉय के बाद केशवचन्द्र सेन (1838-84) ब्रह्मसमाज के एक महत्वपूर्ण स्तम्भ स्वरूप बने। उनका इतना मान था कि इंग्लैंड की महारानी विक्टोरिया ने उन्हें अपने साथ खाने पर निमन्त्रित किया। केशवचन्द्र सेन का सौभाग्य था कि वे श्रीरामकृष्ण परमहंसदेव जैसे युगपुरुष के सान्निध्य में आये। श्रीरामकृष्ण के प्रति उनका आकर्षण बढ़ता गया। वे उनसे मिलते रहे। जब व्यक्ति स्वाभाविक रूप से मृत्यु के करीब जाता है तो उसमें सत्य के प्रति निष्ठा बढ़ती है। मृत्यु की तरफ अग्रसर होते हुए केशवचन्द्र सेन ने भी सत्य के दूसरे पहलू को जाना व समझा। अपने घर में माँ काली की मूर्ति की स्थापना की। मृत्यु पर्यंत उसके पूजक बने रहे। उन्हें तो राह मिल गई और ब्रह्मसमाज प्राकृतिक रूप से 'विलय' की ओर अग्रसर हुआ।

कोई पोथियों में खोजता फिरा

दयानन्द भी श्रीरामकृष्ण परमहंसदेव से मिले। रामकृष्ण में उन्हें एक अनपढ़ अज्ञानी दिखा। अर्जुन ने श्रीकृष्ण में नारायण को देखा था और दुर्योधन ने एक ग्वाले को। अर्जुन ने निहत्थे श्रीकृष्ण को अपने सारथी (दिग्दर्शक) के रूप में माँगा, जबकि दुर्योधन विशाल नारायणी सेना को पाकर प्रसन्न हुआ। केशवचन्द्र ने गुरु के अनुभव लिए, दयानन्द ने पोथियों में ईश्वर को खोजा।

सच्चे ईश्वर के स्वरूप का ज्ञान

दयानन्द को ईश्वर के सान्निध्य का सौभाग्य प्राप्त हुआ होता तो उस तेज में उसका 'अहं' जलकर भस्म हो गया होता। यदि उसके अस्तित्व का ईश्वरीय अस्तित्व के साथ समागम हो चुका होता तो उसे इस बात का ऐलान करने की आवश्यकता ही न होती कि केवल आर्यसमाज को ही सच्चे ईश्वर के स्वरूप का ज्ञान है। ईश्वर प्राप्ति के पश्चात यह संसार भला उसे और क्या दे सकता था जिसे पाने के लिए ढोल बजाकर जताने की आवश्यकता होती कि केवल हमें ही सच्चे ईश्वर का ज्ञान है? क्या आपने ईश्वर को स्वयं कभी उद्घोषणा करते हुए सुना है कि मैं ईश्वर हूँ? उसी प्रकार जिसके अहं का विलय ईश्वरीय सत्ता में हो चुका हो उसे इस बात की घोषणा करने की क्या आवश्यकता कि उसे ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति हो चुकी है? ऐसा तो वही दम्भी करेगा जिसे ईश्वरीय प्रकृति का कोई भान ही नहीं।

आज भी वही रट लगाये हैं

बार-बार भिन्न-भिन्न आर्यसमाजी सन्यासियों एवं आर्यसमाजी पोथी-पढ़े-पंडितों से मैं यही सुनता रहा हूँ कि सच्चे ईश्वर के स्वरूप का ज्ञान केवल आर्यसमाज को ही है। यह भ्रांति उनके मन में समायी न होती यदि आर्यसमाज के संस्थापक ने इस भ्रम का बीज उनके मन में बोया न होता।

तर्क की गति

आर्यसमाजियों की मान्यता है - (1) जो मूर्ति स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर सकता वह अपने पूजकों की रक्षा क्या करेगा (2) वेदों में प्रतिपादित ईश्वर ही सच्चा ईश्वर है। तो क्या वेदों में प्रतिपादित ईश्वर आर्यसमाजियों की रक्षा करेगा? • एक आर्यसमाजी गृहस्थ पंडित जिसने आर्यसमाज का डंका योरप में बजाया, उनके सामने यह प्रश्न रखा - क्या आपने स्वयं अपने व्यक्तिगत अनुभव से सच्चे ईश्वर के स्वरूप को जाना? उनका उत्तर - 'ईश्वर के सच्चे स्वरूप का ज्ञान केवल आर्यसमाज को ही है'। यह एक ऐसी बात है जिसे वे सिद्ध नहीं कर सकते। अर्थात, आर्यसमाजी अपनी मान्यता को ज्ञान की संज्ञा देते है! • आर्यसमाजी तर्क को प्राधान्य देते हैं। तर्क को माध्यम बनाकर अपने ज्ञानी होने का सिक्का जमाते हैं। जहाँ उनका तर्क उनका साथ नहीं देता वहाँ वे अपनी मान्यताओं को ज्ञान का दर्जा देते हुए खोटे सिक्के को असली कहकर चला देते हैं।

समय की कसौटी पर कसा जाता है सत्य

*'समय'* से बड़ा पारखी कोई नहीं होता। उसी 'समय' के मापदण्ड पर तबसे टिका हुआ है यह हिन्दूसमाज जहाँ मानव की याददाश्त तक नहीं पहुँचती। जाने कितने तथाकथित समाज सुधारक आये, और चले गये। इन सभी का अस्तित्व तो पानी के उन बुलबुलों की तरह है जिनकी आयु क्षणिक होती है। 'समय' के साथ इनके 'सच्चे' ईश्वरीय ज्ञान का दम्भ भी टूटता है और इनका अपना अस्तित्व भी मिटने के कगार पर आ खड़ा होता है। अरे, हिन्दूसमाज में जो खामियाँ आयीं वे तो हजारों वर्षों के बाद - वह भी म्लेच्छों/यवनों के लम्बे संग-दोष से। पर ये समाज-सुधारकी बुलबुले तो सैंकड़ों वर्षों तक भी न जी पाये।

अधःपतन

आर्यसमाज गुटों में बँट चुका है (स्वामी अग्निवेश बनाम अन्य) और समाज की सम्पत्ति को लेकर दोनों आपस में लड़ रहे हैं। • आचार्य प्रियदर्शन एवं स्वामी जगदीश्वरानन्द, दयानन्द के *सत्यार्थ प्रकाश* मे खोट निकाल रहे हैं। • यज्ञादि विषयों पर अपनी-अपनी मान्यताओं को लेकर महात्मा प्रभु आश्रित, आचार्य विश्वेश्रवा, पंडित युधिष्ठिर मीमांसक, स्वामी मुनीश्वरानन्द, स्वामी इन्द्रदेव यति (पीलीभीत वाले) आपस में लड़ रहे हैं। आर्यसमाजियों की सार्वदेशिक सभा के अन्तर्गत धर्मार्य सभा उलझे हुए मसलों को सुलझाने का काम करती है। सार्वदेशिक सभा ने कर्मकाण्ड के विषय पर तीन पुस्तकें प्रकाशित की हैं। तीनों एक-दूसरे से मेल नहीं खातीं। • आर्यसमाज की एकसौपच्चीसवीं जयंती पर मुंबई में आयोजित महासम्मेलन में स्वामी सत्यम, आचार्या सूर्या पाणिनी, प्रोफेसर ज्वलन्त कुमार, डॉ सोमदेव, इत्यादि के बीच इस बात पर विवाद खड़ा हो गया कि यज्ञ की आहुति को 'ओम स्वाहा' कहकर डालना उचित है या नहीं। लम्बे समय तक यह विवाद विभिन्न पत्रिकाओं में लेखों के माध्यम से चलता रहा। • आर्यसमाजी स्वयं जानते नहीं क्या सही है और क्या गलत। हिन्दुओं में ज्ञान बाँटने के लिए डुगडुगी बजाते हुए चले आते हैं!

हमसफ़र

जब भी आप आर्यसमाजियों को हिंदुओं के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलते हुए देखें तो अपने-आपसे एक सहज सा प्रश्न पूछें - क्या इस मुद्दे पर आर्यसमाज का स्वार्थ हिंदूसमाज के हितों से टकराता है? आपके सामने जवाब स्प्ष्ट होगा - नहीं। मेरे और आपके स्वार्थ जबतक समान हों तो भला साथ चलने में किसे आपत्ति हो सकती है? • परीक्षा की घड़ी तो तब आती है जब आपको मेरे खातिर अपने स्वार्थों का बलिदान करना होता है। अतः अपने-आपसे दूसरा सवाल पूछें - यदि मसला कुछ ऐसा होता जहाँ आर्यसमाज के स्वार्थ हिंदूसमाज के हितों से टकराते तब क्या आर्यसमाजी हिंदुओं का दामन थामते? • तीसरा प्रश्न - जब आर्यसमाजी (1) हिंदुओं को अपना दुश्मन मानते हैं, (2) हिंदुओं से घृणा करते हैं, (3) हिंदुओं को सनातनधर्म का अंग नहीं मानते, (4) हिंदू देवी-देवताओें के प्रति तिरस्कार की भावना रखते हैं, (5) हिंदुओं को दिशाहीन अज्ञानी मानते हैं - तब क्या वे हिंदुओं की खातिर अपने स्वार्थों का बलिदान देंगे? • आर्यसमाजी हिन्दुओं के सच्चे हितैषी बनना चाहते हैं तो उन्हें सर्वप्रथम हिन्दू-विद्वेष का पूर्णतया त्याग करना होगा और जो यह नही कर पायेंगे उन्हें आर्यसमाज त्यागना होगा। जो आर्यसमाजी हिन्दुओं का पक्षधर होने का दावा करें, उन्हें मन, वचन, कर्म से पहले हिन्दू और उसके बाद आर्यसमाजी बनना होगा।

क्या जैन सचमुच अपने-आपको हिंदू मानते हैं?

Akruti

DeeF³es Fme yeele keÀe GÊej KeespeW efvecveeskeÌle cegkeÀoceeW kesÀ efveCe&³eesb mes -

meJeex®®e v³ee³eeue³e keÀe efveCe&³e efoveebkeÀ 8Deiemle 2005 cegkeÀeocee ¬eÀceebkeÀ 4730 efveCe&³e kesÀ omleeJespe keÀe Henuee JeekeÌ³e nw ''DeeJesokeÀ SkeÀ mebieþve nw pees pewve mecegoe³e kesÀ SkeÀ Jeie& keÀe ÒeefleefveefOelJe keÀjlee nw''~ Supreme Court Of India, Judgement Information System, Appeal (civil) 4730 of 1999, Date of judgement 08/08/2005 (http://judis.nic.in/supremecourt/qrydisp.asp?tfnm=27098 document seen on 6 July 2007)

Dev³e cegkeÀoceW nQ (De) ceêeme G®®ev³ee³eeuee³e S-DeeF&-Deej 1927 ceêeme 228 (ye) yebyeF& G®®ev³ee³eeuee³e S-DeeF&-Deej 1939 yebyeF& 377 (me) S-DeeF&-Deej 1954 Sme-meer 282 (o) S-DeeF&-Deej 1958 Sme-meer 956 (keÀ) keÀuekeÀÊee G®®ev³ee³eeuee³e S-DeeF&-Deej 1968 keÀuekeÀÊee 74 (Ke) (1993) 1 Sce-Sue-pes 140 (ie) meJeex®®e v³ee³eeue³e keÀe efveCe&³e efoveebkeÀ 21 Deiemle 2006 cegkeÀeocee ¬eÀceebkeÀ 9595

http://en.wikipedia.org/wiki/Legal\_status\_of\_Jainism\_as\_a\_distinct\_religion\_in\_India#\_note-1 entry seen on 6 July 07

ÒeMve (1) efHeíues Demmeer Je<eeX ceW Fleveer yeej v³ee³eeue³eeW kesÀ ojJeepes keÌ³eeW KeìKeìeS ieS? (2) keÌ³ee eEnotmeceepe ves yeefn<keÀej efkeÀ³ee Lee pewefve³eeW keÀe? (3) keÌ³ee pewvemeceepe DeHeveer Deueie Hen®eeve ®eenlee Lee Deewj pewvemeceepe keÀes eEnot keÀnueevee ieBJeeje ve Lee? (4) keÌ³ee pewvemeceepe keÀe DeHevee keÀesF& mJeeLe& ígHee Lee FmeceW? (5) Deepe ³eefo pewvemeceepe efkeÀmeer cemeues Hej eEnotmeceepe keÀe meeLe os jne nw lees keÌ³ee FmeefueS efkeÀ Gme cemeues Hej GvekeÀe mJeeLe& eEnotmeceepe keÀe meeLe osves ceW ner nw? (6) keÀue ³eefo keÀesF& Ssmee cemeuee meeceves Deelee nw peneB pewvemeceepe keÀe mJeeLe& efme× neslee nw, eEnotmeceepe keÀe meeLe ''ve'' osves ceW, leye pewvemeceepe keÌ³ee keÀjsiee? • pewve lees F&éej kesÀ DeeqmlelJe ceW efJeéeeme ner veneR keÀjles, peyeefkeÀ F&éej kesÀ DeeqmlelJe kesÀ efyevee eEnot keÀe DeeqmlelJe veneR!

**आर-एस-एस**

mebYeJele: efJeée keÀer meyemes yeæ[er iewj-mejkeÀejer mebieþve nw, Deej-Sme-Sme, meom³e mebK³ee keÀer ¢eqä mes~ efHeÀj Yeer Ssmee keÌ³eeW nw efkeÀ Fme eEnot-yengue je<ì^ keÀer yeeie[esj eEnot-Üsef<e³eesb kesÀ neLe ceW nw Deewj eEnot DeHeves-DeeHekeÀes Demene³e-mee Heelee nw? Ssmee keÌ³eeW, efkeÀ eEnot pevemecegoe³e keÀes keÀYeer Ssmee veneR ueielee efkeÀ nceejs efnleeW keÀer j#ee keÀjves Jeeuee Yeer keÀesF& nw? Ssmee keÌ³eeW, efkeÀ eEnot pevemecegoe³e DeHeveer yeenW HewÀueekeÀj Deej-Sme-Sme keÀes DeHeves Ëo³e mes ueieeves keÀes ueeueeef³ele veneR neslee1? • Ssmee keÌ³eeW, efkeÀ meoe oes<e eEnot kesÀ celLes ner ceæ{e peelee nw, Fme yeneves efkeÀ eEnot yeBìe ngDee nw, eEnot Jeesì-yeQkeÀ yeBìe ngDee nw2? pees Ssmee keÀnles nQ keÌ³ee Jes eEnot keÀer cetueYetle DeeJeM³ekeÀlee keÀes mecePeles nQ? keÌ³ee GvnW eEnot kesÀ veme keÀer Hen®eeve nw? keÌ³ee GvekeÀer mecePe melener veneR nw? keÌ³ee keÀYeer GvneWves eEnot keÀes vesle=lJe Òeoeve keÀjves keÀer ''DeHeveer ³eesi³elee'' Hej ÒeMve-ef®eÚ ueiee³ee? • kegÀí-ner cenerveeW Henues Depecesj keÀer pevemeYee ceW efoS ieS Þeer kesÀ-Sme megoMe&ve kesÀ JekeÌleJ³e keÀer Deesj ®eueW~ GvneWves Hewiecyej cegncceo keÀes YeieJeeve Þeerke=À<Ce kesÀ meeLe SkeÀ-ner leje]pet ceW leewuee Deewj GvnW SkeÀ-otmejs kesÀ mecekeÀ#e yelee³ee~ Hewiebyej cegncceo efpemeves cegmeueceeveeW keÀes eEnogDeeW keÀe mejs-Deece keÀlue keÀjves keÀer efnoe³ele kegÀjDeeve ceW oer Deewj YeieJeeve Þeerke=À<Ce efpevneWves DeOece& kesÀ efJeveeMe keÀer yeele ÞeerceÓieJeÃerlee ceW keÀner - oesveeW keÀes mecekeÀ#e Ieesef<ele efkeÀ³ee! ³en GvekeÀe De%eeve yeesue jne Lee ³ee efHeÀj cegmeueceeveeW keÀer ®eeHeuetmeer? ³eefo Jen De%eeve Lee lees Gmes ueeKeeW mJe³ebmesJekeÀeW ceW HewÀueeves keÀe DeefOekeÀej GvnW efkeÀmeves efo³ee? Ssmee J³eeqkeÌle efpeme mebieþve kesÀ efMeKej Hej yewþe nes keÌ³ee Gmes SkeÀ eEnot mebieþve keÀer meb%ee oer pee mekeÀleer nw? ³eefo ³en De%eeve veneR Lee yeequkeÀ cegmeueceeveeW keÀer ®eeHeuetmeer Leer lees Ssmee J³eeqkeÌle, efpeme mebieþve keÀe meJeex®®e HeoeefOekeÀejer nes, keÌ³ee Jen mebieþve SkeÀ eEnot mebieþve nesves keÀe oce Yej mekeÀlee nw? • Deej-Sme-Sme kesÀ ceO³e-G®®e mlejeW Hej efJejepeceeve J³eeqkeÌle³eeW mes mece³e-mece³e Hej ceQves kegÀí Ssmee megvee Lee efkeÀ Deej-Sme-Sme ceW efveCe&³e meJe&mecceefle mes efueS peeles nQ~ keÌ³ee Deej-Sme-Sme ceW Fme yeele Hej menceefle nw efkeÀ Hewiebyej cegncceo SJeb YeieJeeve Þeerke=À<Ce oesveeW mecekeÀ#e nQ? keÌ³ee Deej-Sme-Sme ceW menceefle nw efkeÀ cegmeueceeveeW keÀer ®eeHeuetmeer keÀjvee ner eEnogDeeW kesÀ efueS Gef®ele nw? • Deej-Sme-Sme keÀe efvecve-ceO³ece Jeie& Flevee otef<ele veneR nw~ Gme mlej Hej DeveskeÀ J³eeqkeÌle eEnot Oece& kesÀ Òeefle keÀneR DeefOekeÀ F&ceeveoej nQ~ Þeer Heer owJecegLeg nQ pees eEnot Jee@Fme veece keÀer ceeefmekeÀ Heeq$ekeÀe ®eueeles jns nQ DeveskeÀ DeeefLe&keÀ keÀefþveeF³eeW kesÀ yeeJe]peto~ Hej Deej-Sme-Sme ves DeHevee neLe yeæ{ekeÀj GvekeÀer mene³elee veneR keÀer~ owJecegLeg Henues ''eEnot nQ'' Deewj ''GmekesÀ yeeo'' Deej-Sme-Sme kesÀ keÀe³e&keÀlee&~ GvekesÀ DeyelekeÀ kesÀ keÀe³e&keÀueeHe, eEnot-efnle kesÀ Òeefle GvekeÀer peeieªkeÀlee keÀes oMee&leer jner nw~ GveneWves Þeer kesÀ-Sme megoMe&ve kesÀ Depecesj Yee<eCe kesÀ meboefYe&le efnmmes keÀes íeHee, SJeb Deej-Sme-Sme kesÀ Gve cegùerYej J³eeqkeÌle³eeW kesÀ cele keÀes Yeer íeHee efpevneWves kesÀ-Sme-megoMe&ve keÀer Depecesj pevemeYee ceW keÀer ieF& Iees<eCee keÀes DeeHeeqÊepevekeÀ ceevee~ 1 (Fme meboYe& ceW ieebOeer-nl³ee keÀe yenevee ve oW, ³en efkeÀmmee yengle Hegjevee nes ®egkeÀe nw) 2 (Deej-Sme-Sme meceefLe&le Deìue efyenejer yeepeHeF& keÀer mejkeÀej keÀer nej kesÀ HeM®eele, Deej-Sme-Sme kesÀ SkeÀ yengle ner G®®emlejer³e SJeb peeves-ceeves J³eeqkeÌlelJe mes cesjer yeele nes jner Leer, leye ³es oueerueW meeceves Dee³eeR)

Cऋफ्फ् ेंुफ्CJफ् ुफ्Sफ्व्फ्द्धSफ् +ज़्फ्xफ्श्च्‌-+फ्ज़्फ्Eुफ्श्च्‌ झ्र्ेnठ्ठिौ व्फ्फ्xफ्iफ्श्च् ेु?

kegÀí mece³e Henues lekeÀ Yeer Hebpeeye kesÀ eEnot HeefjJeej, DeHeves HeefjJeej mes SkeÀ-SkeÀ yesìs, efmekeÌKeOece& kesÀ nJeeues efkeÀ³ee keÀjles Les~ efmekeÌKe mecegoe³e ve kesÀJeue eEnogDeeW mes pevecee-HeveHee Lee, yeequkeÀ eEnogDeeW mes ner HeÀuelee-HetÀuelee Yeer jne Lee~ efHeÀj SkeÀ mece³e Dee³ee peye efmekeÌKe DeHeveer Deueie Hen®eeve ceeBieves ueies~ Deeies ®euekeÀj DeHeves efueS Deueie Jeleve (Keeefuemleeve) keÀer Yeer ceeBie keÀjves ueies~

<क्रुफ्फ्<क्र-+क्Oफ्श्च्‌Wफ्फ्श् Eुद्ग Eुफ्क्ष्ीद्गMफ्क्ष्ीद्ग +फ्ेंJफ्क्ष्ी +ज़्फ्xफ्फ् क्ष्क्ीMफ् ज्ञ्फ्फ्<क्र

DeepekeÀue kegÀí Ssmee HewÀMeve ®eue Heæ[e nw efkeÀ nj keÀesF& pees eEnot Oece& mes ìtì-HetÀì keÀj efvekeÀuee, Jen ³ener oeJee keÀjlee nw efkeÀ GmekesÀ mecegoe³e keÀe pevce ner eEnotmeceepe ceW megOeej ueeves kesÀ efueS ngDee Lee~ efpemekeÀe Yeer JesyemeeFì osKees Jen ³ener oce Yejlee nw~ Dee³e&meceepeer, pewveer lees ³en oeJee keÀjles ner Les, Deye efmekeÌKeeW ves Yeer nukesÀ-nukesÀ ³en oeJee Deeies yeæ{evee Meg© keÀj efo³ee nw (http://www.indialife.com/Religions/sikhism1.htm) • ³eneB lekeÀ efkeÀ Deye nceejer meJeex®®e v³ee³eeue³e Yeer Dev³e HegmlekeÀeW mes G×jCe oskeÀj DeHeves efveCe&³eeW ceW FvneR yeeleeW keÀes oesnjeves ueieer nw "In philosophical sense, Jainism is a reformist movement amongst Hindus like Brahamsamajis, Aryasamajis and Lingayats [See : 1) Encyclopedia of Religion and Ethics Vol. 7 pg. 465; 2) History of Jains by A. K. Roy pgs. 5 to 23; and Vinoba Sahitya Vol. 7 pg. 271 to 284]" Supreme Court Of India, Judgement Information System, Appeal (civil) 4730 of 1999, Date of judgement 08/08/2005 (http://judis.nic.in/supremecourt/qrydisp.asp?tfnm=27098 document seen on 6 July 2007) • Heæ{ves Jeeues keÀes ueielee nw efkeÀ peeves efkeÀlevee meæ[e-ieuee jne nesiee ³en eEnotmeceepe pees Fmes Fleves meejs megOeejkeÀeW keÀer DeeJeM³ekeÀlee Heæ[ ieF&~ HegmlekeÀ-7 Heæ{W Deewj omleeJespeeW mes peeveW efkeÀ JeemleefJekeÀlee FmekesÀ efJeHejerle ngDee keÀjleer Leer~ F&meeF&-Debûes]peeW keÀer efpeme keÀejeriejer keÀe ]efpe¬eÀ ceQves HegmlekeÀ-7 ceW efJemleej mes efkeÀ³ee nw, Gmes DeHevee jbie lees ueevee ner Lee~ efHeÀj peJeenjueeue keÀer í$eíe³ee ceW HeveHes-Heues nceejs ceekeÌme&efmemì FeflenemekeÀejeW ves Yeer F&meeF&-Debûes]peeW keÀer efJejemele keÀes Deeies yeæ{eves ceW keÀesF& keÀmej veneR íesæ[er~ • DeleSJe Flevee mHeä peeve ueW efkeÀ peyelekeÀ eEnotjeä^ ve yevesiee leyelekeÀ DeeHekeÀer mecem³eeDeeW keÀe meceeOeeve Yeer ve efceuesiee~ Hej Ssmee eEnotjeä^ DeeHekesÀ efkeÀmeer keÀece ve Dee³esiee efpemekeÀer yeeie[esj Deìue efyenejer, ueeueke=À<Ce De[Jeeveer, kesÀ-Sme megoMe&ve pewmes J³eeqkeÌle³eeW kesÀ neLe ceW nesieer efpevekeÀer efveÿe Hej ÒeMveef®eÚ ueie mekesÀ~ meeLe ner DeeHekeÀes Gve meYeer keÀer Hen®eeve Yeer keÀjveer nesieer pees efoKeles kegÀí nQ, Deewj nesles kegÀí~ • eEnotjeä^ lees DeeHekeÀe ''Henuee Heæ[eJe'' nesiee~ GmekesÀ Henues DeeHekeÀes DeveskeÀ pebieue Heej keÀjves neWies~ Gve pebieueeW mes iegpejles jeneW keÀer Hen®eeve keÀjveer nesieer~ Gve jeneW Hej DeveskeÀ Ieele efyeís neWies pees DeeHekeÀes OeesKes mes HebÀoeW ceW pekeÀæ[ ueWies~ • eEnotjeä^ lees DeeHekeÀe ''Henuee Heæ[eJe cee$e'' nesiee~ Deeies keÀer ³ee$ee Deewj Yeer uebyeer SJeb keÀefþve nesieer~ meejs DebieeW ceW pees efJe<e HewÀuee efo³ee ie³ee nw, GmekeÀer meHeÀeF& keÀjves ceW oce efvekeÀue pee³esiee~ Hej neskeÀj jnsiee ³en! GmekesÀ HeM®eele ner eEnotjeä^ kesÀ veJeefvece&eCe keÀe Hegveerle keÀe³e& DeejbYe nes mekesÀiee~ • Hej Fve meyekesÀ Henues DeeHekeÀes yengle kegÀí peevevee nesiee - pees kegÀí peevee nw DeyelekeÀ, Henues Gmes efceìe keÀj~